शोषण और सामाजिक चेतना अभिव्यक्त करती कहानियाँ

डॉ. प्रेमसिंह के. क्षत्रिय

अध्यापक अहमदाबाद

हिन्दी कहानी : नई सदी का सृजन और सरोकार के अन्तर्गत प्रस्तुत अंतर्राष्ट्रीय परिसंवाद में सन् 1990 के बाद की हिन्दी कहानी के संदर्भ में यह शोषण और सामाजिक चेतना अभिव्यक्त करती कहानियों में विस्तृत स्वरूप में निरूपित करने का एक सफल प्रयास है। इस दौर की कहानियों में श्री मदन मोहन श्रीवास्तव की कहानी है, असल में वजह कुछ और है, अपने लोग, समर्पण आदि कहानियों में सामाजिक चेतना दिखाई देती है।

रघुनन्दन त्रिवेदी की कहानियों में यह ट्रेजेडी क्यों हई, वह लड़की अभी जिन्दा है, हमारे शहर की भावी लोक कथा, इन्द्रजाल तथा अन्य कहानिया, हमारे पुरोंधा आदि प्रमुख है। उषा प्रियंवदा की कहानियों में शून्य तथा अन्य रचनाएं - 1996, एक कोई दूसरा, जिंदगी और गुलाब के फूल, कितना बड़ा झूठ, मेरी प्रिय कहानियाँ आदि है । इन कहानियों में सामाजिक चेतना अभिव्यक्त कर ही कहानियाँ है जिसमें सामाजिक दृष्टि दिखाई दे रही है। इस दौर की कहानियों में मदन मोहन श्रीवास्तव की कहानियों में हल्दी चढ़ी देह, अंतराल, धूप-छाव, सूटकेस में बन्द जिन्दगी, सीढियाँ, ममता, मन तुलसी की सुगंध, अधूरा मकान, आखिरी कमरा, प्रतीक्षा आदि इस दौर की प्रमुख कहानियाँ है। इन कहानियाँ का अपना एक महत्त्व है। वर्तमान समय में जो बदलाव-परिवर्तन हो रहे है, उनका चित्र उभर कर इन कहानियों में आया है। इन कहानियों के माध्यम से हमें शोषण और सामाजिक चेतना अभिव्यक्त करती कहानियों को हम जानते है, इस प्रकार का साहित्य समय में एक दर्पण का काम करता है, अब इन कहानियों को विस्तृत स्वरूप में देखे –

रत्नेश जी एक युवा लेखक और कवि के रूप में जाने जाते हैं। करीब पाँच वर्षो से दिल्ली में पत्रकारिता व लेखन के क्षे में संघर्षरत हैं। एक दिन यहाँ के जाने माने प्रकाशक नन्दलाल जी के प्रतिष्ठत संस्थान अल्का प्रकाशन में वह अपनी पांडुलिपि लेकर पधारे। वहाँ अल्का वर्मा को देखकर दंग रह गये। उससे विशेष बातें करना उचित नहीं समझकर वह नन्दलाल जी के केबिन में चले गये । जहाँ

नन्दलाल जी चारो तरफ घुमने वाली कुर्सी पर बैठकर किसी नवोदित लेखक की पांडुलिपि को काटने छांटने में लगे हुए थे। उन्हें शांतचित्त देखकर रत्नेश जी बोले, 'महाशय, आप द्वारा सुझाये गये प्लाट के मुताबिक पांडुलिपि तैयार हो गई है। लेकिन आजकल मेरी माँ बीमार है। मुझे अग्रिम रूप में पाँच हजार रूपयों की आवश्यकता है। यो तो मेरा यह मौलिक उपन्यास छपने के बाद आप मालो-माल हो जायेंगे।

नंदलाल जी परिचारिका अल्का वर्मा को बुलाकर बोले, रत्नेश जी, एक उभरते हुए रचनाकार हैं। इनसे अनुबंध पत्र पर हस्ताक्षर करवा कर, इन्हें पाँच हजार का क्रॉस चेक अकाउंट ब्रांच में दिलवा दीजिये। आप मेरे बहुत ही आत्मीय और सज्जन व्यक्ति हैं। इनकी माता जी ने मेरी हमदर्दी इसलिए है कि जब मेरी पत्नी अस्पताल में थी तो उसकी सेवा-सुश्रुषा में वह कोई कसर नहीं छोड़ी थी। फिर भी मेरी शकुंतला नहीं बची थी। आज जब वे बीमार है तो रत्नेश जी की सहायता करना मेरा इंसानी फर्ज है।

'अल्का जी, एक दिन आप ही तो कह रही थीं कि रत्नेश जी से दहेद के लोभियों पर एक आँचलिक उपन्यास लिखवाकर प्रकाशित करूँ। जिसकी प्रति रातों-रात बिक जायेगी और मैं मालोमाल हो जाऊँगा। हस्ताक्षर करवाते समय अनुबंध पत्र की सारी बातें रत्नेश जी को समझा दीजियेगा।

परिचारिका अल्का वर्मा नंदलालजी की सहचरी और समाज सेविका के रूप में भी विख्यात है। जब वे यह इस संस्थान में आयी हैं, तभी से नंदलाल जी पुस्तकों के व्यापार में मालोमाल हुए हैं।

परिचारिका अल्का जी अनुबंध पत्र की प्रतियां और चेक-बुक लेकर अपनी केबिन में आ गई हैं। इस प्रकाशन संस्थान के नियमों के अनुरूप अनुबंध पत्र पर रत्नेश जी हस्ताक्षर कर पाँच हजार का चेक तो ले लिये हैं किन्तु, उनकी अंतरात्मा से आवाज आई, मूर्ख लेखक ! यहाँ तुम्हारा शोषण हो रहा है। तुम अपनी पांडुलिपि वापिस ले लो।

रत्नेशजी अपनी मजबूरियों का ख्याल कर सहम से गये। नंदलाल जी एवं अल्का वर्मा को धन्यवाद ज्ञापित करते हुए वह बोले, 'अल्का जी ! मैं अपने उपन्यास क फाईनल प्रूफ स्वयं पढूंगा तथा मैटर कम्पोज होने के बाद ही यह तय कर पाऊंगा कि यह उपन्यास समर्पित किसको करूं तथा कॉपीराइट किसके नाम से...। अल्का जी, इस उपन्यास का अंतिम प्रूफ कब तक मिलेगा ?'

'अगले सप्ता तक...।'

'अच्छी बात है।'

'रत्नेश जो आप को एतराज न हो तो पहले मैं इस पाडुलिपि का अवलोकन कर सकती हूँ ?'

'क्यों नहीं।'

'रत्नेश जी, चिंता की कोई बात नहीं है। आपकी इस पांडुलिपि का अवलोकन स्वयं करने के बाद शीघ्र ही कम्पोजिंग के लिये भेज दूंगी। आप अगले सप्ताह फाईनल प्रूफ ले लीजियेगा।'

रत्नेशजी अपना भूदानी झोला सम्हालते हुए अल्का जी की ओर दाहिनी हाथ बढ़ाये तो वह सकुचा सी गयी। कुछ क्षण रुककर वह भी अपनी हथेली अभिवादन के लिए आगे की ओर बढ़ा दी। हैलो-हाय के बाद रत्नेशजी बोले, 'अल्का-जी ऐसे तो नंदलाल जी नेक दिल के प्रकाशक एवं समाज सेवक है। इनकी पहुँच हिन्दी प्रदेश के पुस्तकालयों में है, किन्तु सुस्त मन मिजाज के व्यक्ति है। कॉपीराईट अपने नाम से करवाने के बाद भी नवोदित लेखकों को तीन-तीन साल तक लटकाते रहते हैं। उनका शोषण करते हैं। काफी दौड़ाने के बाद नवोदित लेखकों की पांडुलिपि में फेरबदल करके अपने नाम से छापते और धन कमाते हैं। यहाँ तक रायल्टी की भी राशि गोल कर जाते हैं।

रत्नेश जी के जाने के बाद अल्का वर्मा अपने अतीत के दिनों में खो सी गयीं। क्या यही वह अमरेन्दर बाबू हैं। जिनसे मेरी पहली मुलाकात चन्द्रकला दीदी अपने घर पर करवायी थी। नहीं ये वो अमरेन्द्र बाबू तो एक सौम्य मुखाकृति वाले युवक हैं। ये रत्नेश जी तो बिल्कुल पागल, मवाली, हैं। दीदी बताती थी कि उनके देवर अमरेन्द्र बाबू मुझसे प्यार करते हैं। ये रत्नेश जी तो बिल्कुल सुखे हुए तुनक मिजाजी स्वभाव के इंसान हैं। फ्री लांसरी करते-करते इनके चेहरे सुख गये हैं। माथे की लटें खिचड़ी हो आई है और नंदलाल जी के खुशामदी लेखक कवि हैं। उनके आदेश पर गर्म-गर्म उपन्यास, कथा, कहानियां लिखते हैं। दीदी के देवर अमरेन्द्र कुमार 'अकेला' जी तो एक आदर्शवादी लेखक थे। बचपन में वह दहेज उन्मूलन पर एक उपन्यास 'बेटी को मत जलावो' लिख रहे थे। पता नहीं उस उपन्यास का क्या हुआ ? तब मेरे पिताजी की माली हालत ठीक नहीं थी। जाने-अनजाने में अमरेन्द्र कुमार 'अकेला' जी को अपना दिल दे बैठी थी। धत तेरे की आदमी जैसा आदमी नहीं होता है। दीदी के देवर अमरेन्द्र कुमार 'अकेला' जी ऐसे निठल्लू युवक थे। नहीं... नहीं... वह तो हर वक्त सर्वहारा और

दलित साहित्य का अध्ययन करते रहते थे। रूपये-पैसे के मामले में किसी के मोहताज नहीं थे। वह तो स्वाभिमानी युवक थे।

हम रघुनन्दन त्रिवेदी की कहानी अपने लोग में शोषण और सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति को देखे –

दावे से कुछ भी नहीं कहा जा सकता था, क्योंकि मामले के सारे तथ्य जितने आदमी के पक्ष में थे, उतने ही औरत के पक्ष में भी थे, और अगर कुछ बातें आदमी के खिलाफ दिखाई दे रही थीं तो कुछ बातें उस औरत के खिलाफ भी नज़र आ रही थीं। तात्पर्य यह कि तथ्य अपनी जगह तटस्थ थे और यह लोगों के नज़रिए पर ही निर्भर था कि वे किस बात का क्या मतलब निकालते हैं। मसलन, उस औरत का विधवा होना सिर्फ एक तथ्य था, लेकिन लोग इसे एक आधारभूत बात मानते हुए किसी निष्कर्ष तक पहुँचना चाहते थे। जहाँ कुछ लोग उसे विधवा होने के कारण निरीह मानकर उसके प्रति हमदर्दी से भरे हुए थे, वहीं कुछ उद्दण्ड किस्म के लड़के यह राज जाहिर करने से नहीं चूके कि विधवा होने की वजह से वह औरत किसी मर्द की जरूरत महसूस कर रही हो सकती है।

"नहीं, इस तरह किसी विधवा (और अकेली) स्त्री के चरित्र पर लांछन लगाना कतई ठीक नहीं।" यह बात उन लोगों ने ज़ोर देते हुए कही जो लोग औरत को, उसके विधवा होने की वजह से मासूम मान रहे थे।

ऐसे लोगों के सामने औरत का विगत तीन सालों का साफ-सुथरा जीवन था जो उसके पति के बगैर अकेले इसी मुहल्ले में गुज़ारा था। तीन साल पहले उसके पति कृष्ण बिहारी ने अपने घर में पंखे से लटककर आत्महत्या कर ली थी। वह पुरालेख-विभाग में अभिलेखों की नकल देनेवाला क्लर्क था। कुछ लोगों का ख्याल था कि उसने सरकारी रकम की हेराफेरी कर ली थी और वह फँस गया था , इसलिए उसने आत्महत्या जैसे घृणित कर्म का सहारा लेकर खुद को छुड़ा लिया था, जबकि कुछ लोग यह मानते थे कि कृष्ण बिहारी निर्दोष था, उसे कुछ चालाक किस्म के लोगों ने सरकारी दस्तावेज गुम हो जाने के मामले में फँसा दिया था। जो भी हो, इतना तय था कि पति की आत्महत्या के मामले में औरत को कोई दोष नहीं था और अगर दोष था तो भी इतना ही कि वह अपने पति के मन में चल रही किसी तरह की उथल-पुथल से अनभिज्ञ रही थी।

अपने पती की मौत के बाद गत तीन सालों से वह औरत इसी मुहल्ले में रह रही थी और इस दौरान उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया था जिसे उसके विरुद्ध इस्तेमाल किया जा सकता हो। सरकारी नियमों के तहत वह पति के एवज में पुरालेख-विभाग में ही चपरासी नियुक्त हो गई थी और माथे पर साड़ी का पल्लू रखते हुए नियमित रूप से काम पर जा रही थी। यही बात आदमी के साथ भी थी। अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद लगभग आठ-दस सालों से वह भी अकेला था। मुहल्ले में बिजली से चलने वाले घरेलू उपकरणों की मरम्मत करने की दुकान थी उसकी। बिजली की इस्त्री, हीटर, पंखे, कूलर र इसी तरह की चीज़ें ठीक किया करता था वह।

मुहल्ले की ज्यादातर लोग नौकरीपेशा थे, इसलिए उनके काम पर चले जाने के बाद कई बार उसे लोगों के घर जाकर छत के पंखों में ग्रीसिंग जैसे काम करने पड़ते थे, परन्तु अभी तक मुहल्ले की किसी भी स्त्री ने मिस्तरी (आदमी को सब लोग मिस्तरी ही कहते थे) के खिलाफ कोई शिकायत नहीं की थी।

पहले सब मिस्तरी की पत्नी ज़िन्दा थी, मिस्तरी उशके साथ अपनी दुकान से थोड़ी दूरी पर एक गली में रहता था। परन्तु पत्नी की मौत के बाद उसने दुकान में ही घर बसा लिया था। उसकी दुकान मोटरगाड़ियाँ रखने वाले गैरंज जैसी थी। अगर वहाँ गाड़ियाँ रखी जातीं तो एक के बाद एक लम्बाई में दो जीपें रखने के बाद भी थोड़ी-सी जगह बच जाती। लेकिन दुकान की चौड़ाई अपेक्षाकृत कम थी . अपनी घर-गृहस्थी का सामान दुकान में रखते वक्त मिस्तरी ने लोहे का एक पतरा र चिक लगाकर दुकान के दो हिस्से कर दिए थे। पिछले हिस्से में दो मैले-कुचैले बिस्तर, लोहे की डिबियाँ, बरतन, एक पुराना स्टोव और दीवार पर लटकी मक्का-मदीना की एक पवित्र तस्वीर थी। दुकान के अगले हिस्से में मिस्तरी के औजारों, खराब पड़ी इस्तरियों, पंखों और जंग लगे हीटरों के अलावा सिगरेट की खाली डिबियों की भरमार थी।

मिस्तरी की उम्र पैंतालीस से पचास के बीच की थी। वह दुबला-पतला, पीले दाँतों वाला आदमी था जो हर वक्त चारमीनार नाम की सस्ती, बिना फिल्टर वाली सिगरेट पीता रहता था और ज्यादा सिगरेट पीने के कारण कभी-कभी सीढियाँ चढ़ने या जोर से हँसने पर उसे खाँसी आती थी। यह शायद उसके पेशे का असर था कि उसके शरीर से हर समय बिजली के जले हुए तेल या ग्रीस की बास

आती रहती थी। परन्तु मिस्तरी सच्चरित्र था। यह बात उन लोगों ने जोर देकर कही जिनके छोटे-छोटे बिजरी के काम मिस्तरी ने बिना मेहनताना लिये कर दिए थे।

हम रघुनन्दन त्रिवेदी की कहानी असल में वजह कुछ और हैं – में शोषण और सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति को देखे –

इतनी आसानी से काम बन जाने की उम्मीद तो साजनदास को हरगिज नहीं थी। वह तो सोच रहा था कि उसे महीनों बैंक के चक्कर लगाने पड़ेगें। पर किस्मत अच्छी थी उसकी कि उसे जगनानी साब मिल गये। अर्जी देने के सात दिन बाद ही जगनानी साब ने उसे बैंक बुलाकर तीन हजार रुपये का कर्ज दिला दिया।

'इतनी जल्दी !' और सिर्फ पाँच सौ में ?' साजनदास की पत्नी ने रुपये गिनकर अलमारी में रखते हुए पूछा।

'सबको नहीं मिलता। महीनों चक्कर लगाने पड़ते हैं। जगनानी साब अपने सिन्धी भाई हैं, इसलिए। नहीं तो पाँच सौ की रकम तो चाय-पानी में ही उठ जाती है। साजनदास ने गर्व से कहा। भले लोगों की कमी नहीं है दुनिया में।'

जगह के लिए साजनदास को ज्यादा इधर-उधर भटकने की जरूरत नहीं पड़ी। हालांकि उसने हरगिज नहीं सोचा था कि सिर्फ तीन दिनों में ही ऐसी मौके की जगह मिल जाएगी। पर किस्मत अच्छी थी उसकी कि उसे दल्लाराम मिल गया। फाकत सौ रूपये लेकर दल्लाराम ने साजनदास को एक जगह ढूँढकर दिखला दो।

'यह चौराहा देख रहे हो। यहाँ पूरे एक किलोमीटर की दूरी तक चाय का कोई ठेला नहीं। इस लाइन में मीटर पार्ट्स की दुकानें, छोटे वर्कशॉप और उधर उस तरफ रोटियों का ढाबा है। मिस्त्री लोग पूरा दिन चाय पीते रहते हैं, परन्तु तुझे मालूम चाय आती किधर से है ?' दल्लाराम और वह एक नीम के नीचे खड़े थे उस वक्त।

'ठेठ उस सिनेमा वाले चौराहे से।' दल्लाराम ने अगरे चौराहे की तरफ इशारा करते हुए बताया।

साजनदास को वह चौराहा और वह नीम के नीचे वाली जगह जँच गई। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि इतनी भीड़-भाड़ वाले शहर में ऐसी बढ़िया जगह उसे मिल पाएगी। वह दल्लाराम के प्रति बेहद आभारी हुआ।

'जगह मिल गई। इतनी जल्दी ?' साजनदास की पत्नी को आश्चर्य हुआ।

'हाँ, और वह भी सिर्फ सौ रुपये में।'

'सिर्फ सौ ?'

डॉ. प्रेमसिंह के. क्षत्रिय
अध्यापक अहमदाबाद
5, फौजदार न्यू पार्क,
सैजपुर-बोघा,
नरोडा रोड,
अहमदाबाद-382345

संदर्भ साहित्य

1. हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा
   संपादक - डॉ. रामदरश मित्र, डॉ. नरेन्द्र मोहन
2. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी चरित्र की अवधारणा, डॉ. निलिमा शर्मा
3. नई कहानी संदर्भ व प्रकृति, संपादक - देवी शंकर अवस्थी
4. मेरी प्रिय कहानियाँ - उषा प्रियंवदा
5. हमारे शहर की भावी लोक कथा, संपादक- सत्यनारायण
6. अंतराल और अन्य कहानियाँ, मदन मोहन श्रीवास्तव